मंजुल भगत की कहानियों में व्यक्त नारी संवेदना

डॉ. बालाजी श्रीपती भुरे
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
शिवजागृती वरिष्ठ महाविद्यालय,
नलेगाँव, ता ता. चाकुर जि. लातूर।

मनुष्य एक सामाजिक एवं संवेदनशील प्राणी होने के नाते वह समाज में रहकर ही अपना एवं दूसरों का विकास करता है। समाज में रहकर वह जो कुछ देखता है, सुनता है और अनुभूति करता है उसी को वह मौखिक एवं लिखित रूप में व्यक्त करते रहता है। तात्पर्य, संवेदना

का संबंध मनुष्य की अनुभूति से है। यहाँ यह भी ध्यान रखना होगा कि संवेदना अनुभूति की किसी एक सतह पर टिकी नहीं होती अपितु उसका संबंध नित-नयी अनुभूतियों से होता है क्योंकि जीवन में हमेशा मनुष्य की पुरानी अनुभूतियाँ पीछे छूट जाती हैं और नयी अनुभूतियाँ जुड़ जाती हैं। अर्थात् अनुभूतियों की जितनी विविधता उतनी ही संवेदनाओं में विविधता आना स्वाभाविक है।

मनुष्य विविध प्रकार का ज्ञान-विज्ञान, चिंतन, दर्शन आदि को पहले अपने जीवन में आत्मसात करता है और वही आत्मसात किया हुआ ज्ञान एवं अनुभव मानव संवेदना का रूप धारण कर साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। इसीलिए साहित्य की कोई भी विधा हो उसका मूलाधार विविध संवेदनाएँ ही होती हैं। मनुष्य संवेदनशील प्राणी होने के कारण वह एक-दूसरों के सुख-दुखों में सम्मिलित होता है। विविध परिस्थितियाँ उसे प्रभावित करती रहती हैं। उन परिस्थितियों से प्रभावित अनुभूतियों को व्यक्त करने की कोशिश वह करते रहता है। अपनी अनुभूति, कल्पना और तीव्र भावावेगों के बल पर साहित्यकार चाहे वह लेखक हो या कवि अपने साहित्य की सृजना करता है। परिणाम स्वरूप लेखक की रचनाओं में भी सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक आदि कई परिस्थितियों के प्रभाव से संवेदना अपना अलग-अलग रूप धारण करती हैं।

मूलत: 'संवेदना' शब्द मनोविज्ञान और साहित्य दोनों से संबंधित है। मनोविज्ञान की दृष्टि से संवेदना का अर्थ मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभूति से है और यही अनुभूति जब रचनाकार द्वारा कलात्मक ढंग से लिखित रूप में अभिव्यक्त होती है, तो वह किसी एक साहित्य कृति को जन्म देती है। व्यापक और गहराई से सोचा जाए, तो मानवीय संवेदनाएँ केवल ज्ञानेन्द्रियों की अनुभूति तक सीमित न रहकर मनुष्य मन की गहराई में छिपी उदात्त वृत्तियों के साथ जुड़ जाती हैं। इससे संवेदना की व्यापकता का हमें अंदाज़ आ जाता है। वैसे साहित्य, समाज और नारी का संबंध प्राचीन काल से चला आ रहा है। हर युग के साहित्य ने नारी चिंतन को वाणी देने का प्रयास किया है। एक ओर नारी के बारे में-

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैस्तु न पूजन्ते सर्वास्तत्रा फल: क्रिया।"[1]

यह कहकर उसकी सराहना की गई, तो दूसरी ओर उसी के बारे में-

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में है पानी।"[2]

कहकर उसकी वेदना एवं पीड़ा को भी अभिव्यक्त किया गया।

आरंभ से ही साहित्यकार अपनी अनुभूतियों के आधार पर अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी संवेदनाओं के विविध रूपों को अभिव्यक्त करते आ रहा है। यहाँ कहानी विधा को लेकर देखा जाए तो, समकालीन हिंदी कहानियों में जिन महिला कहानीकारों का आगमन हुआ, उनमें कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मैत्रेयी पुष्पा, शिवानी, कृष्णा अग्निहोत्री, सूर्यबाला, सुनीता जैन, नासिरा शर्मा, मालती जोशी, मंजुल भगत आदि कई लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में नारी संवेदनाओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। इनमें से मंजुल भगत ने नारी जीवन के विविध रूपों, चरित्रों और उनकी समस्याओं को लेकर कहानियाँ लिखी हैं। उनकी कहानियों में परम्परागत जीवन मूल्यों और आधुनिक जीवन मूल्यों के बीच संघर्ष चित्रित हुआ है। इनकी नारी कहीं यथार्थवादी है, तो कहीं आदर्शवादी।

मंजुल भगत ने अपनी कहानियों के माध्यम से व्याकुल और पीड़ित नारी मन को खोज़ने की कोशिश की है, जो अपने ही दायरे में छटपटाती रही है। यह नारी अशक्त है परंतु सशक्त बनकर मुक्ति पाने की कोशिश करती है। यहाँ मंजुल भगत की कहानियों के जरिए नारी संवेदनाओं पर चिंतन करने का प्रयास किया जा रहा है।

मंजुल भगत की **'ख़ोज'** कहानी की नायिका नीलिमा अपने अस्तित्व अर्थात् अपने भीतर के 'मैं' की ख़ोज करने की कोशिश करती है। वह अपने अस्तित्व को पहचानना चाहती है। वह शिक्षित, कामकाजी और विवाहित नारी है, जो एक साथ घर और नौकरी की दोहरी ज़िन्दगी जीती है। दोहरे जीवन की इस आपाधापी में वह अपने भीतर के 'मैं' को ढूँढना चाहती है। घर से दफ़्तर और दफ़्तर से घर की भागदौड़ से वह तंग आती है। उसके मन में सवाल उठते हैं, "जैसे उसका कोई निज़ी अस्तित्व ही नहीं है; मिसेज वर्मा, नीलिमा, नीलू सब अलग-अलग नाटक में किए गए अलग-अलग 'रोल' हैं। उसके अंदर का जो 'मैं' है उसका 'रोल' क्या है?"[3] उसे तो दफ़्तर, पति, माँ-बाप यहाँ तक कि घर की धोबन, जमादारिन, कहारिन, सभी ने एक-एक व्यक्तित्व बख्ःश दिया है, उसी के अनुरूप ही उसे जीना पड़ता है, इसमें उसका अपना अस्तित्व कहाँ खो गया? अपने अस्तित्व को खोजने की छटपटाहट उसे बेचैन करती है।

नीलिमा अपना पूर्ण जीवन जीना चाहती है। उसे अपना परिचय बेटी, पत्नी और कॉपीराइटर के रूप में अपूर्ण-सा लगता है। उसको अपने अस्तित्व का आभास तब होता है, जब वह माँ बनती है। नवजात शिशु को देखकर उसे लगता है कि, "यही है क्या 'मैं' जो पकड़ाई में नहीं आ रहा था। यह तो साकार रूप में मेरे सम्मुख आ प्रस्तुत हुआ है। क्या मैं इसे ही ख़ोजती फिर रही थी? यह स्थायी रूप क्या पति से क्षणिक घनिष्ठता का ही परिणाम है? या फिर वह आवेश भर क्षण भी पूर्ण था, जिसकी अभिव्यक्ति इस शिशु में हुई है।"[4] उसकी यह अपने भीतर के 'मैं' को ख़ोजने की सोच विवादों में फँसकर, खिजती हुई प्रश्न उठाते हुई विलुप्त हो जाती है। वह मातृत्व को ही 'मैं' समझकर संतुष्टि पाने का आभास तो करती है लेकिन मातृत्व ही व्यक्तित्व की पूर्णता नहीं होती। अपने 'अस्तित्व' या 'मैं' की तलाश यह कभी न समाप्त होनेवाली प्रक्रिया है।

'नागपाश' कहानी की नायिका शिवानी आधुनिक विचारों को लेकर चलनेवाली युवती है। अपने माता-पिता के विरोध के बावजूद उसने प्रशांत नामक युवक से प्रेम-विवाह किया था। दुर्भाग्यवश जैसे-जैसे समय बीतता गया वैसे-वैसे दोनों के मधुर संबंधों में खटास आती गयी। प्रशांत के खोकले व्यक्तित्व को लेकर शिवानी को लगता है कि रोज ही उसके प्रशांत में से निकलकर एक नया अजनबी उसके सामने खड़ा हो जाता है और वह उस अजनबी को पहचान नहीं पाती। रोज-रोज के ऐसे अपने जीवन से उसे घूटन-सी हो जाती है, लेकिन घर की मर्यादा को ध्यान में रखकर वह हर पीड़ा को सहती रहती है, लेकिन इस घर को छोड़कर वह जा भी नहीं सकती। उसने बहुत बार सोचा कि वह, "अब यहाँ नहीं रहेगी। पर यह घर और यह प्रशांत उसे ऐसे नागपाश में जकड़े हैं जिससे अपने को वह छुड़ा नहीं पाती। विरक्ति से उठे हुए उसके कदम, प्रशांत के एक स्नेहिल चुंबन ने, कुशलता से सजाए इसी घर के किसी आकर्षक कोने ने रोक लिए हैं। कैसा है यह मोहपाश?"[5] लेकिन जब वह माँ बननेवाली होती है, तो उसे अपने बच्चे के भविष्य की चिंता सताने लगती है। उसे अपनी चिंता, परेशानियाँ अपने आनेवाले बच्चे के जीवन में नजर आती हैं। वह अपने आनेवाले बच्चे को लेकर सोचती है कि, "कैसे जन्म होगा इसका? कैसे पलेगा इस वातावरण में? दुःख झेलने को एक और निरीह प्राणी आ जाएगा! वह भी मेरी ही तरह इस विषम जाल में फँस जाएगा। उस विवेकहीन पुरुष से एक और प्राणी का संबंध स्थापित हो जाएगा- बाप और बेटे का रिश्ता। फिर वह भी मेरी तरह उस रिश्ते को कभी नहीं तोड़ पाएगा।"[6] इसी विचार से उसने माँ बनने से पहले ही गर्भपात कर अपने बच्चे को जन्म के पहले ही नागपाश से मुक्त कर दिया।

'निशा' कहानी की पात्र भी आधुनिक सोच को लेकर चलनेवाली युवती है। वें पाँच बहनें थीं, जिनमें निशा चौथे नं. की थी। बेटी से बेटे को श्रेष्ठ समझने की समाज की मान्यता को खंडित कर निशा ने स्वयं बेटी होकर भी बेटे की तरह अपने परिवार की परवरिश की है। निशा आत्मनिर्भर बनने के लिए पढ़ना चाहती थी। वह हर कक्षा में अच्छे नंबरों से उत्तीर्ण होती जाती है। लेकिन घर में माता-पिता को उसकी शिक्षा की अपेक्षा लड़के की कमी हमेशा महसूस होती थी। इसीलिए तो माँ कहती है, "काश, हमारी निशा लड़का होती। बुढ़ापे का आसरा होती।"[7] इसे फर्स्ट आकर कौन-सी नौकरी करनी है, आई तो भी ठीक, न आई तो भी ठीक। निशा शादी के बिल्कुल ख़िलाफ़ थी, इसीलिए पिताजी जब निशा के लिए वर ढूँढने लगे, तो निशा ने डंके की चोट पर कह दिया था कि, "शादी-वादी मुझे अभी नहीं करनी, चाहे पिताजी मुझे जिंदा ही क्यों न चुनवा दें।"[8] उसे तो केवल पढ़ने की लालसा थी। इसीलिए एम.ए. में फर्स्ट क्लास प्राप्त करने के पश्चात् जब वह "पी-एच.डी. के स्कालरशिप पर जब वह घर छोड़कर अमेरिका जा रही थी, तब भी उसे घर छोड़ने की व्यथा से अधिक भविष्य की आशातीत कल्पनाओं ने आत्मविभोर कर रखा था। वह मंत्रमुग्ध-सी चली गई थी सफ़लता की उच्चतर सीढ़ियाँ चढ़ने को आतुर।"[9] अमेरिका से पी-एच.डी. प्राप्त कर जब वह अपने घर लौटती है, तो पिता की मृत्यु से वह आहत हो जाती है। घर में केवल माँ की बेबस, उजड़ी-सी छाया-काया रह गयी थी। इसीलिए नानाजी ने निशा की माँ को अपने साथ चलने को कहा, तो निशा का यह कहना कि, "नहीं माँ, नहीं,

तुम यहाँ ही रहोगी। मेरे पास। मुझे हॉल में तालियों की गड़गड़ाहट नहीं चाहिए। कोई दर्शक-प्रशंसक नहीं चाहिए।"[10] यह उसके अपने परिवार के प्रति उत्तरदायित्व को ही व्यक्त करता है। और माँ भी उसे बेटा समझकर उसके साथ रहने का फैसला लेती है। निशा अपनी माँ को बेटे की कमी तक महसूस होने नहीं देती। यहॉ निशा के माध्यम से लेखिका ने यह साबित करने का प्रयास किया है कि बेटी भी बेटे से कम नहीं होती।

'विधवा का शृंगार' कहानी मधुरिमा और शामी के चरित्रों को अभिव्यक्त करती है, जो बिल्कुल भिन्न-भिन्न हैं। मधुरिका कपिल की पत्नी है, तो शामी कपिल की प्रेमिका। कपिल केवल चार दिन की बीमारी भुगत उन दोनों पर वैधव्य की श्वेत चादर चढ़ाकर चला गया था। अर्थात् कपिल की मृत्यु से मधुरिमा विधवा हो गई और शामी विधवा की तरह जीने लगती है।

पति की मृत्यु के पश्चात् दसवें दिन मधुरिका का रोना थम गया था क्योंकि "मधुरिमा ने सहसा मृत्यु जैसे अकाट्य तथ्य को स्वीकार लिया था और यह भी समझ लिया था कि किसी भी जीवित शरीर का मृत से बँधा रहना स्वाभाविक नहीं, एक थोंपी हुई बात है।"[11] इसका तात्पर्य यह है कि मधुरिमा पति की यादों में ही अपना जीवन नष्ट नहीं करना चाहती। वह परम्परा को तोड़कर अतुल के साथ दूसरा विवाह भी कर लेती है। लेकिन शामी अपने प्रेमी कपिल को भूला भी नहीं पाती, लोकलाज के मारे अपनी पीड़ा को किसी के सामने व्यक्त भी नहीं कर पाती और प्रेमी कपिल की मृत्यु पर वह जी भरकर रो भी नहीं सकती। वह सोचती है कि, "शायद किसी ने सच भाँप लिया होता तो वह अनाम, प्यार-सा रिश्ता धूल में लौटने लगता, कीचड़ में सन जाता और कोई उस संबंध को एक बहुत ही सरल और सामान्य-सा नाम दे डालता। तब वह नाम उसके कानों की सुरंग में उतरकर ऐसा तुमुल नाद कर उठता कि उस बेहूदा शोर से माथा फट जाता।"[12] यह स्पष्ट हो जाता है कि शामी का प्रेम भले ही अवैध था, लेकिन था तो पवित्र। लेखिका ने यहाँ इन दोनों नारी पात्रों के माध्यम से परस्पर विरोधी संवेदनाओं को प्रस्तुत किया है। एक ओर मधुरिका आधुनिक विचारों को लेकर चलनेवाली वह स्त्री है, जो विधवा की घुटन भरी जिन्दगी न जीते हुए पुनर्विवाह करके नई जिन्दगी जीती है। वह परम्परा, आदर्श आदि के नाम पर स्वयं को मिटाना नहीं चाहती, तो दूसरी ओर शामी विधवा न होकर भी प्रेमी के मृत्यु के बाद भी विधवा-सा जीवन जीती है। एक यथार्थवादी है, तो दूसरी आदर्शवादी।

'नालायक बहू' कहानी की नायिका कामिनी अपने प्रेम, त्याग और सेवाभाव से भारतीय नारी के आदर्श रूप को स्थापित करती है। प्रतिकूल परिस्थितियों में भी वह अपने पति की मर्यादा और अस्तित्व की रक्षा के लिए अपनी सास और ननद के तानें चुपचाप सुनती रहती है। सास को अपनी बहू का नौकरी करना, सजधज कर रहना और अपने बेटे का बेरोजगार रहना भाता नहीं। सास जब अपने दूसरे बेटे के पास जाने का निर्णय लेती है, तो कामिनी का माँ और पत्नी की प्रतिबद्धता के अंतर को बताते हुए यह सोचना कि, "तुम माँ हो न! इसी से एक बेटे की शेखी न बघार पाने पर दूसरे की बखान सकती हो। मैं पत्नी हूँ न, और पति तो दो-चार होते नहीं, इसी से इकलौते पति की कमियों को लेकर भी जीने का प्रयत्न कर रही हूँ।"[13] यह परिवार में समन्वय बनाए रखने की उसकी इच्छा को व्यक्त करता है। यहॉ परम्परावादी भारतीय नारी का रूप हमाने सामने आता है।

कामिनी को माँ न बनने पर सास और ननद द्वारा प्रताड़ना भी सुननी पड़ती है। कामिनी के ख़िलाफ़ उसके पति शेखर को भी फुसलाया जाता है। माँ जब कामिनी को लेकर अपने बेटे से कहती है कि, "शेखर बेटे, डॉक्टरनी को दिखा उसे! अगर कोई उपचार नहीं है, तो बेटे, क्या तू निपूता ही मरेगा? अरे, बाल-बच्चा न होने पर तो कानून तलाक तक देने की इजाजत दे देवे है!"[14] सास की इन कड़वी बातों को कामिनी चुपचाप सह लेती है बावजूद इसी के कि कमी तो उसके अपने बेटे में ही है। जब दोनों डॉक्टर से जाँच करवाते हैं, तो कमी शेखर में ही पाई जाती है, लेकिन यह बात शेखर को मालूम नहीं होती। अपने पति के आत्मसम्मान को बचाए रखने के लिए कामिनी झूठ तक कह देती है कि, "आप दोनों बिल्कुल ठीक हैं, बच्चा होना न होना भगवान के हाथ है।"[15] कामिनी यहाँ तक नहीं रुकती अपितु अनाथ आश्रम से एक चार वर्षीय बालक को गोद लेती है। इस निर्णय से कामिनी अपनी सास की नज़रों में नालायक बहू तो बन गई, लेकिन परिवार में समन्वय एवं संतुलन रखने का उसका प्रयास, पति के आत्मसम्मान को बचाने का प्रयास और अनाथालय से बच्चे को गोद में लेकर संतान की कमी को पूर्ण करने के उसके प्रयत्न ने समाज की दृष्टि से स्वयं को लायक तथा आदर्श बहू के रूप में स्थापित किया।

निष्कर्ष :

इस प्रकार मंजुल भगत की कहानियों में मध्य और निम्न-मध्य वर्ग की नारी संवेदनाएँ व्यक्त हुई हैं। ये संवेदनाएँ विभिन्न स्तरों पर देखी जाती है। 'खोज' कहानी की नायिका जहाँ अपने अस्तित्व की खोज करती है, वहाँ 'नालायक बहू' की कामिनी अपने प्रेम, त्याग और सेवाभाव से भारतीय नारी के आदर्श रूप को स्थापित करती है। 'नागपाश' कहानी की नायिका स्वयं अपने पति के

नागपाश से तो मुक्त नहीं होती लेकिन अपने बच्चे को उसके जन्म के पहले ही पिता के नागपाश से मुक्त कर देती है। 'विधवा का शृंगार' में दो नारियों की अपने पति और प्रेमी को लेकर अलग-अलग संवेदनाएँ हैं। जिसमें एक मधुरिमा है, जो अपने पति कपिल की मृत्यु के बाद वैधव्य का जीवन न जीकर दूसरा विवाह कर सुख से जीती है, तो शामी अपने प्रेमी कपिल के मृत्यु से विधवा न होकर भी विधवा की तरह जीवन जीती है। इस समग्र चिंतन से कुछ निष्कर्ष बिंदू हमारे सामने आते हैं। जैसे-

- आज नारी संवेदना में अपनी अस्मिता की तलाश दिखाई दे रही है।
- मंजुल भगत के कुछ नारी पात्र सामाजिक परम्पराओं में जकड़े हुए दिखाई देते हैं।
- कुछ नारी पात्रों में लेखिका ने पारम्पारिक मान्यताओं के विरुद्ध विद्रोह की भावना भर दी है।
- मंजुल भगत की नारी कहीं-कहीं मोहभंग की स्थिति से भी गुजरती है।
- कुछ नारी पात्रों में पुरुषों के शोषण को सहने की आदत है, तो कुछ अपने कर्तव्य, प्रेम, सेवाभाव से परिवार को जोड़ने का भी कार्य करती है।
- लेखिका के कुछ नारी पात्र यथार्थवादी राह पर चलते हैं, तो कुछ आदर्शवादी राह पर।

कुल मिलाकर मंजुल भगत ने अपनी कहानियों में समाज के विविध व्यक्तित्व वाले नारी पात्रों को सँवारा है। उनके नारी पात्र विभिन्न प्रकार की संवेदनाओं को अभिव्यक्त करती हैं, जिनमें रुढ़ीवादी, विद्रोही, प्रगतिवादी संवेदनाएँ सम्मिलित हैं। नारी के प्रति अपनी भावनाओं को विविध संवेदनाओं के साथ अपनी कहानियों में अभिव्यक्त करने में यहाँ लेखिका को सफलता मिली है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. संपा. डॉ. चमनलाल गौतम- मनुस्मृति- (3,56), पृ. 82
2. डॉ. व्ही. एन. भालेराव- भारतीय साहित्य शास्त्र- पृ. 98
3. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 56
4. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 60
5. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 36
6. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 29
7. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 69
8. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 69
9. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 70
10. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 71-72
11. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य-पृ. 74
12. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ.75
13. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 43
14. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 53
15. संपा. कमलकिशोर गोयनका- मंजुल भगत समग्र कथा-साहित्य- पृ. 53